बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 12 अंक 293

कम न हो हस्तांतरण

हाल के दशकों में राज्य सरकारों के संचालन से जुड़ी जवाबदेहियों में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। राज्य सरकारों को जो सेवाएं प्रदान करनी चाहिए और जो वे प्रदान कर सकती हैं उन पर अधिक राजनीतिक जोर दिया जाने लगा है। जाहिर है इसे राज्य सरकारों को मिलने वाली कर हिस्सेदारी में बढ़ोतरी से जोड़कर देखा जाता है। कर ही देश और उसके नागरिकों के बीच जुड़ाव का प्राथमिक जरिया है। जानकारी के मुताबिक 15वें वित्त आयोग के माध्यम से इस परिपाटी को उलटा जा रहा है।

इस समाचार पत्र में प्रकाशित एक रिपोर्ट के मुताबिक राज्य सरकारों के व्यय के लिए अलग किया जाने वाला टैक्स पूल का 42 फीसदी हिस्सा वास्तव में कम किया जा सकता है। इसमें बांटने वाले पूल में किसी तरह के बदलाव को शामिल नहीं किया गया है। वित्त आयोग की शर्तों में बाद में हुए बदलाव के आधार पर आगे चलकर इसमें भी परिवर्तन कर सकता है। उक्त बदलाव के अनुसार राष्ट्रीय संसाधनों पर रक्षा और राष्ट्रीय सुरक्षा की आवश्यकताओं का अलग से दावा होने की बात कही गई है।

चूंकि रक्षा केंद्र सरकार का दायित्व है इसलिए आयोग द्वारा ऐसा करने से यकीनन बांटने लायक पूल में कमी आएगी। यदि राज्यों के एकीकृत हस्तांतरण में कमी के साथ मिलाकर देखें तो यह राशि बहुत ज्यादा होगी और इसके अभाव में राज्यों की जरूरी सेवाएं मुहैया कराने की क्षमता पर असर पड़ सकता है। हमें इस दिशा में आगे नहीं बढ़ना चाहिए। आयोग जहां यह दावा कर सकता है कि केंद्र सरकार की खास योजनाओं और पहलों के लिए पहले से आवंटित धन में दावेदारी करके इसकी क्षतिपूर्ति की जा सकती है। परंतु यह पर्याप्त नहीं होगा। राज्य सरकारें लोगों को जरूरी सेवाएं मुहैया कराने के लिए सीधे तौर पर उत्तरदायी हैं। उनके पास यह अधिकार होना चाहिए कि वे जरूरी संसाधन अपने पास रहते हुए शासन संबंधी निर्णय ले सकें। हाल के दशकों में देश की राजनीति कमोबेश इसी दिशा में आगे बढ़ी है। राज्य स्तर के राजनेताओं से उनके मतदाता यही अपेक्षा करते हैं कि वे उन्हें जरूरी सेवाएं मुहैया कराएंगे और यह अपेक्षा गलत भी नहीं है। जाहिर है राज्य सरकारों को मुहैया कराए जाने वाले संसाधनों में यह लोकतांत्रिक गतिशीलता नजर आनी चाहिए।

इसमें दो राय नहीं कि केंद्र सरकार कहेगी कि उसके पास खुद संसाधनों की कमी है। खासतौर पर वस्तु एवं सेवा कर (जीएसटी) व्यवस्था लागू होने के बाद ऐसा हुआ है। परंतु इसके लिए वह किसी और को दोष नहीं दे सकती। अर्थव्यवस्था के आकार में इजाफा उसकी जवाबदेही है और कर संग्रह में कमी आने की एक अहम वजह आर्थिक वृद्धि में आया ठहराव भी है।

राज्य भी जीएसटी को लेकर शिकायत कर सकते हैं। वे कह सकते हैं कि उन्होंने कुछ अप्रत्यक्ष कर जुटाने की अपनी शक्तियां केंद्र को सौंप दीं और हस्तांतरणीय कर पूल में कमी करके तो उन्हें पुरस्कृत नहीं किया जा सकता है।

देश की आम राजनीतिक परिस्थितियों पर गौर करना भी आवश्यक है। हाल के वर्षों में देश के संघीय ढांचे को लेकर कई तरह के तनाव उभरे हैं। कई राज्य सरकारों द्वारा नागरिकता संशोधन अधिनियम को लागू करने के प्रति अनिच्छा इसका केवल एक उदाहरण है। अन्य उदाहरणों की बात करें तो अलग-अलग जनांकीय दबाव और देश के भौगोलिक क्षेत्र में सापेक्षिक राजनीतिक शक्ति में बदलाव भी हमारे सामने हैं। ऐसे में कहा जा सकता है कि राज्यों को अधिक वित्तीय संसाधन आवंटित करने की दशकों लंबी गतिशील प्रक्रिया में बदलाव करना राष्ट्रीय हित में नहीं होगा। इसे समझदारी नहीं माना जा सकता है।

अजय मोहंती

ब्रांड भारत और ब्रांड मोदी को झटका

आर्थिक पराभव और पहचान आधारित राजनीति ने ब्रांड भारत और ब्रांड मोदी दोनों को नुकसान पहुंचाया है।

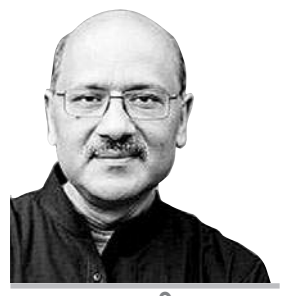

राष्ट्र की बात

शेखर गुप्ता

क्या दुनिया हमेशा भारत को नीचा दिखाने के षडयंत्र में लगी रहती है? क्या बड़ी ताकतें, खासतौर पर पश्चिम के लोकतांत्रिक देश भारत के उभार से आशंकित हैं? पिछले कुछ समय से सरकार के प्रति आस्था रखने वालों में एक जुमला चल रहा है- हिंदू भारत के उदय के खिलाफ ईसाई-इस्लामिक षडयंत्र का जुमला। क्या शेष विश्व भारत तथा अन्य देशों मसलन चीन आदि के साथ अलग-अलग व्यवहार करते हैं?

उपरोक्त में से अंतिम को छोड़कर सारी बातें गलत हैं। अंतिम बात इसलिए सच है क्योंकि चीन की अर्थव्यवस्था का आकार हमसे बहुत बड़ा है। सच तो यह है कि अब तक के सात दशक में तमाम विश्व भारत की सफलता की कामना करता रहा है।

पाकिस्तान और चीन जैसे पारंपरिक शत्रुओं को छोड़ दिया जाए तो ऐसे देश का नाम लेना मुश्किल है जिसने भारत का भला न चाहा हो या जिसे भारत की नाकामी से लाभ हुआ हो। यह इस तथ्य के बावजूद है कि हम हर दशक में अपने बारे में अपेक्षाएं मजबूत करने और फिर न केवल खुद को बल्कि अपने वैश्विक प्रशंसकों तक को नीचा दिखाने की आदत सी डाल चुके हैं।

देश की आर्थिक प्रगति में आया ठहराव एक झटका है। बहरहाल, बड़ी दिक्कत यह है कि सामाजिक संकेतकों पर पिछड़ने, लोकतंत्र की रैंकिंग में गिरावट, भ्रष्टाचार में इजाफा, सीएए/एनआरसी को लेकर शांतिपूर्ण देशव्यापी प्रदर्शनों और सत्ता की ओर से आक्रामक,भेदभावपूर्ण और प्रतिशोधात्मक कार्रवाई के कारण आदि के कारण हमारा नैतिक कद घटा है।

शीतयुद्ध के बाद के तीन दशक में दावोस बैठकों में भारत भले ही पसंदीदा रहा हो या नहीं लेकिन उससे अपेक्षाएं की गईं। वह जिस प्रकार अपनी विविधता के साथ बढ़ता रहा, जिस लोकतांत्रिक ढंग से वहां सत्ता परिवर्तन हुआ, उसने अपनी सोच को आर्थिक और सामरिक दृष्टि से वैश्वीकृत किया। इन तीन दशकों में दुनिया के सामने कई बड़े संकट आए क्योंकि दुनिया के बाकी हिस्से यह सिलसिला दोहरा नहीं सके। बाल्कन देशों से लेकर पश्चिम एशिया और अफ्रीका तक इसके उदाहरण बिखरे हुए हैं।

सन 1991 के बाद के दौर में भारतीय अर्थव्यवस्था तेजी से बढ़ी और ब्रांड इंडिया मजबूत हुआ। दुनिया अचरज में थी कि यह अराजक देश तो साल दर साल सामाजिक और राजनीतिक रूप से स्थिर होता जा रहा है और वैश्विक वृद्धि का वाहक बन गया है। चीन भारत से आगे था लेकिन वहां अधिनायकवादी शासन था। उसकी राजनीतिक अर्थव्यवस्था ऐसी थी जिसे कोई अपनाना नहीं चाहता था। पुतिन या ईरान के आयतुल्लाह तक नहीं। भारत इसके उलट था। यह पूरी दुनिया के सामने उदाहरण था कि कैसे बड़ा, विविधतापूर्ण देश लोकतांत्रिक तरीके से बल्कि लोकतंत्र के कारण आगे बढ़ रहा है। कल्पना कीजिए कि अगर भारत जैसे विविधतापूर्ण देश के पास उदार, लोकतांत्रिक, समावेशी राजनीतिक और सामाजिक संस्कृति नहीं होती तो उसका क्या होता?

यह सोवियत संघ, युगोस्लाविया या पश्चिमी एशिया की तरह खंड-खंड हो सकता था या रूस, तुर्की अथवा चीन की तरह अधिनायकवादी हो सकता था। तेजी से विकसित होता हुआ, सुरक्षित और स्थिर भारत अपनी गरीबी, विविधता और लाखों समस्याओं के बावजूद लोकतंत्र और उदारवाद का मूल्यवान वाहक था।

अब यह खतरे में है। भारत के दशकों पुराने दोस्त और प्रशंसक अब उसे संदेह की दृष्टि से देख रहे हैं। अक्सर यह सवाल सुनने को मिलता है कि भारत में चल क्या रहा है? क्या हालात और खराब होने वाले हैं? आप यहां तक पहुंचे कैसे? कोई विदेशी शक्ति, चाहे वह राजनीतिक हो या कॉर्पोरेट या नेता, वह भारत में आए इस ठहराव का जश्न नहीं मना रही। लेकिन हमारे मित्रों को लग रहा है कि कुछ तो दिक्कत है।

हम ऐसी स्थिति में नहीं हैं जिसे महानता से गिरावट की संज्ञा दी जा सके। इसलिए क्योंकि हमारे मित्र भी निहायत आशावादी हैं। उन्हें यकीन है कि तमाम झटकों के रूप में भारत का विचार कायम रहेगा। उन्हें इस बात से राहत मिलती है कि देश के कुछ बड़े संस्थान, कभी न्यायपालिका तो कभी मीडिया प्रतिरोध करते हैं। महिलाओं, युवाओं और मुस्लिमों का व्यापक प्रतिरोध आशा जगाता है। संदेश यही है कि हमारे यहां समस्या है। लेकिन दुनिया का दूसरा कौन सा देश होगा जहां इस स्थिति में भी पुरुष और स्त्रियां, मुस्लिम और हिंदू सड़कों पर एकत्रित होकर संविधान की प्रस्तावना का पाठ करते होंगे।

इसका एक अतिराष्ट्रवादी प्रतिरोध यह होगा कि यदि आप अपने जैसे लोगों से ही बात करेंगे जो आपकी तरह भ्रमित, वाम-उदारवादी हैं तो भला आप और क्या सुनेंगे? वे तो देश में पहली बार लोकतांत्रिक ढंग से चुनी गई दक्षिणपंथी हिंदू सरकार को लेकर अवमानना का भाव ही रखेंगे।

दो बातें समझने की आवश्यकता है। पहला, इस श्रेणी के लोग पारंपरिक रूप से सबसे बड़े भारत प्रेमी रहे हैं। सन 1991 के बाद देश के उदय की सराहना करने वालों में भी वे अव्वल रहे हैं और पाकिस्तान जनित आतंकवाद का विरोध करने वालों में भी। इन दशकों में उन्होंने पाकिस्तान को वैश्विक सरदर्द, जिहाद की पाठशाला और एक परेशान करने वाला देश ही माना है।

आज जब इमरान खान भारत की तुलना सन 1930 के दशक के नाजी जर्मनी से करते हैं तो ये खामोशी से देखते रहते हैं। वे सहमत नहीं हैं, न ही वे इसे सच होते देखना चाहते हैं लेकिन उन्हें पता नहीं कि भारत का बचाव कैसे किया जाए? वे अकादमिक लोगों और पत्रकारों को वीजा मिलने की समस्या की बात करते हैं, मीडिया पर दबाव की बात करते हैं और पूछते हैं कि भारत चीन की तरह व्यवहार क्यों कर रहा है?

दूसरा ये संदेह केवल बौद्धिकों, नीति जगत और मीडिया के मन में नहीं हैं। वैश्विक कारोबारी जगत भी चिंतित है। नीतिगत स्थिरता गायब हो चुकी है। नए कर और नियमन देखने को मिल रहे हैं। कर एवं नियामकीय प्रक्रियाओं और सबसे बढ़कर न्यायपालिका में अव्यवस्था देखने को मिली और अब आयात प्रतिस्थापन, स्वदेशी, छोटे व्यापारियों के बचाव को लेकर पुरानी समाजवादी व्यवस्था की वापसी नजर आ रही है। सबसे बढ़कर आपके मंत्री हमें फटकारते हैं। संक्षेप में कहें तो भारत एक चिड़चिड़े राष्ट्र में बदल रहा है। यह उन्हें पसंद नहीं।

अगले कदम में शायद हम एक सॉफ्ट पावर से हार्ड पावर बनने की ओर बढ़ जाएंगे। कहा जाएगा कि सन 2014 के बाद एक नया इतिहास शुरू हुआ है और यह भारत दूसरों को खुश करने के लिए पीछे नहीं हटता। यहां फिर दो समस्याएं सामने हैं।

पहली बात, यह बदलाव तभी हो सकता है जब आपने वैसी हार्ड पावर अर्जित की हो। अंतरराष्ट्रीय सामरिक जगत की समझ रखने वाले अच्छी तरह जानते हैं कि पुलवामा में हुए आतंकी हमले के बाद भारत निर्णायक प्रतिकार करने का हौसला रखता है लेकिन इसके साथ ही पाकिस्तान जैसे छोटे से देश को दंडित न कर पाने की हमारी कमजोरी भी उजागर हो गई। ऐसे में खुद को हार्ड पावर जताना अपरिपक्वता है।

दूसरा, मार्केटिंग की दुनिया का कोई भी व्यक्ति आपको बताएगा कि राष्ट्रों समेत तमाम ब्रांड की अपनी खासियत होती है। चीन के मामले में यह है सख्त, बेलागलपेट, सक्षम शासन, जातीय समरसता, सैन्य शक्ति और हर वर्ष दुनिया में सर्वाधिक लोगों को मृत्यु दंड देते हुए भी इसे गोपनीय बनाए रखना।

पाकिस्तान जो इन दिनों हमारा पसंदीदा संदर्भ बिंदु है, उसके बारे में तो बात न ही करें तो बेहतर है। भारत का बुनियादी ब्रांड मूल्य है लोकतंत्र, विविधतापूर्ण जीवन की सहजता, समावेशी शासन, तर्कपूर्ण और विचारपूर्ण समाज। भारत किसी भी दृष्टि से नरम राज्य नहीं है। अगर दूसरे विश्व युद्ध के बाद भारत इकलौते बड़े, विविधतापूर्ण देश के रूप में उभरा है जो अक्षुण्ण है और लगातार मजबूत हुआ है तो ऐसा हो भी नहीं सकता। तमाम अन्य देश मसलन सोवियत संघ से पाकिस्तान तक, चाहे जितने सख्त रहे हों, वे टूट गए। हमें इसे भारत के प्रति, खासकर हिंदुत्व के प्रति पश्चिम का पूर्वग्रह कहकर खारिज कर सकते हैं। इससे यह हकीकत नहीं बदलेगी कि पहचान की राजनीति और आर्थिक पराभव ने एक ब्रांड के रूप में भारत को नुकसान पहुंचाया है। इसका असर ब्रांड मोदी पर भी पड़ा है। हमें गहरी सांस लेकर सुधार शुरू करने की आवश्यकता है। हम कह सकते हैं कि हमें परवाह नहीं लेकिन 4.8 फीसदी की वृद्धि दर और 45 वर्ष की उच्चतम बेरोजगारी दर पर यह जवाब सही नहीं।

राजस्थान एवं गुजरात में टिड्डियों के हमले का कारण जलवायु परिवर्तन

जमीनी हकीकत

सुनीता नारायण

अब यह बिल्कुल स्पष्ट हो गया है कि ऑस्ट्रेलिया के जंगलों में भयंकर आग का कारण जलवायु परिवर्तन से जुड़ा है। इस आग से वहां की जमीन बुरी तरह झुलस गई तथा कई लोग और जंगली जानवर मारे गए हैं। वहां के जंगलों में आग लगना सामान्य है लेकिन इस भयानक आग का कारण यह था कि गर्मी का स्तर बढ़ रहा है। इस वजह से वहां मैदान सूख गए और स्थिति विकराल हो गई। लंबे समय से पड़ रहे सूखे के कारण वहां आग के लिए आदर्श स्थिति बन गई। लेकिन दुनिया का ध्यान ऑस्ट्रेलिया के जंगलों में लगी आग की तरफ था और दूसरी ओर हमारे यहां इससे भी बदतर मानवीय संकट पैदा हो गया। इसका संबंध भी जलवायु परिवर्तन से है।

दिसंबर में टिड्डियों के भारी भरकम झुंडों ने राजस्थान और गुजरात में फसलों को चौपट कर किसानों की आजीविका को बरबाद कर दिया। इससे फसलों को हुए नुकसान के बारे में अभी तक ज्यादा अनुमान नहीं है लेकिन सरकारों ने दिल्ली के आकार से लगभग तीन गुना अधिक क्षेत्र में कीटनाशकों का छिड़काव किया है। लेकिन ऑस्ट्रेलिया के जंगलों में लगी आग की तरह यह दलील दी जा सकती है कि इस क्षेत्र में टिड्डियों का हमला आम है तो फिर से हंगामा क्यों?

'डाउन टु अर्थ' पत्रिका में मेरे सहयोगियों ने अपनी जांच में पाया है कि जिस तरीके से टिड्डियों के हमले हो रहे हैं उसमें बदलाव आया है। इसकी वजह भारत ही नहीं बल्कि उन इलाकों में हो रही बेमौसमी बारिश है जहां टिड्डियां पनपती हैं। इनमें लाल सागर के तट से अरब प्रायद्वीप, ईरान और राजस्थान शामिल हैं। यह कीट बहुत तेजी से अपनी आबादी बढ़ाता है और टिड्डियों के एक औसत झुंड में 80 लाख तक कीट हो सकते हैं। यह झुंड एक दिन में 2,500 लोगों या 10 हाथियों के बराबर खाना खा सकता है। पहले प्रजनन काल में 20 गुना बढ़ता है। दूसरे प्रजनन काल में यह 400 गुना और तीसरे प्रजनन काल में 16,000 गुना बढ़ता है। इसका सीधा मतलब यह है कि अगर प्रजनन काल लंबा होगा तो इसकी संख्या में भारी इजाफा होगा। इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि टिड्डियों का झुंड हमें अकाल की याद दिलाता है।

इस साल टिड्डियों के झुंड बहुत बड़े थे और इस वजह से ज्यादा तबाही हुई। क्यों? इसके कई कारण हैं जिनकी पड़ताल की जरूरत है। पहली वजह यह थी कि इस बार पाकिस्तान के सिंध प्रांत और पश्चिमी राजस्थान में बेमौसम बारिश हुई थी। भारत का मरुस्थल टिड्डियों के प्रजनन के लिए मुफीद जगह नहीं है। इन कीटों को अपना परिवार बढ़ाने के लिए गीली और हरी जमीन की जरूरत होती है। लेकिन पिछले साल इस इलाके में समय से पहले बारिश हुई। यही वजह थी कि मई 2019 में ही वहां टिड्डियों के हमले की खबरें आने लगी थी। लेकिन इन्हें नजरंदाज किया गया। इसके बाद मॉनसून ज्यादा लंबा खिंच गया। अक्टूबर तक इसकी वापसी नहीं हुई थी। बारिश जारी रही और कीट पश्चिम एशिया और अफ्रीका की ओर पलायन करने के बजाय यहीं जमे रहे और प्रजनन करते रहे।

दूसरी वजह यह रही कि मई 2018 में चक्रवाती तूफान मेकुनू और फिर अक्टूबर 2018 में चक्रवाती तूफान लुबान के कारण अरब प्रायद्वीप में भारी बारिश हुई। इससे मरुस्थल में झीलें बन गईं जो कीटों के प्रजनन के लिए आदर्श स्थिति है।

टिड्डियों ने इन गरीब और युद्ध प्रभावित क्षेत्रों में भारी तबाही मचाई लेकिन बाहरी दुनिया को इसकी जानकारी नहीं मिली। फिर लाल सागर के तटीय इलाकों में पिछले साल जनवरी में भारी बारिश हुई। यह भी बेमौसम बारिश थी। वहां बरसात का मौसम नौ महीने तक खिंच गया और इस दौरान टिड्डियों ने अपनी तादाद में भारी इजाफा किया।

टिड्डियों के प्रकोप पर काम कर रहे वैज्ञानिकों का कहना है कि इनकी संख्या इतनी बढ़ गई कि लाल सागर के तटीय इलाकों में पर्याप्त फसल नहीं हो पाई। साथ ही समुद्री चक्रवाती तूफानों और हवा के प्रवाह में बदलाव के कारण टिड्डियां भारत पहुंच गईं। अमूमन टिड्डियां मॉनसूनी हवाओं के साथ भारत आती हैं। वैज्ञानिकों का कहना है कि 2019 में टिड्डियां लाल सागर को पार करते हुए अफ्रीका और फारस की खाड़ी से होते हुए ईरान पहुंचीं। सर्दियों में टिड्डियों का दल ईरान में आराम करता है। वहां से उन्होंने भयंकर झुंडों के रूप मे पाकिस्तान और भारत का रुख किया।

टिड्डियों के झुंड ने जब गुजरात और राजस्थान के बाद पाकिस्तान और ईरान की ओर लौटना शुरू किया तो तीसरी पीढ़ी के कीट पैदा हो चुके थे। इनका जन्म राजस्थान में मॉनसून की अवधि बढ़ने के कारण हुआ था। यही वजह है कि इस साल नुकसान अधिक हुआ है। किसान बुरी स्थिति में हैं। अब इस बात के पर्याप्त सबूत हैं कि इस क्षेत्र में बेमौसम बारिश या बार-बार समुद्री चक्रवाती तूफान आने की वजह जलवायु परिवर्तन से जुड़ी है। इसलिए इस बात को समझना मुश्किल नहीं है कि परस्पर निर्भर और वैश्वीकृत दुनिया में हमें क्या देखने को मिल रहा है। यह केवल लोगों या पूंजी के प्रवाह के बारे में नहीं है। यह केवल ग्रीनहाउस गैसों के बारे में नहीं हैं जो किसी सीमाओं में नहीं बंधी हैं। इसका संबंध जलवायु परिवर्तन के कारण कीटों के प्रकोप और कीटों के हमलों के वैश्वीकरण से है।

लेकिन हमारी असमान और सूचना-विभाजित दुनिया में जो बात इसे ज्यादा घातक बनाती है, वह यह है कि हम ऑस्ट्रेलिया के जंगलों की आग के बारे में तो जानते हैं लेकिन अपने इलाके में हो रहे टिड्डियों के हमले से अनभिज्ञ हैं। हम यह संबंध नहीं बना रहे हैं। अफ्रीका से एशिया तक हम अपने लोगों का दर्द नहीं समझ सकते हैं जो पहले से ही जलवायु से जुड़े जोखिम वाले भविष्य में जी रहे हैं। इसलिए उन्हें जलवायु परिवर्तन के बारे में बताने या भाषण देने की बात भूल जाइए। इस समस्या से निपटने के लिए मिलकर काम कीजिए। इसकी समस्या हम हैं। वे हमसे पीड़ित हैं। यह ठीक नहीं है।

(लेखक सेंटर फॉर साइंस ऐंड एनवॉयरनमेंट से संबद्ध हैं)

कानाफूसी

पत्रकारों की मुश्किल

पहली बार केंद्रीय मंत्रिमंडल में शामिल एक मंत्री की मीडिया टीम और उनके मंत्रालय से संबद्ध पत्र सूचना कार्यालय की टीम के बीच तालमेल की कमी ने संबंधित बीट कवर करने वाले पत्रकारों के लिए भ्रम और देरी की स्थिति निर्मित कर दी है। यह इससे पहले वाले मंत्री की स्थिति से एकदम उलट है। उनकी व्यक्तिगत मीडिया टीम मंत्रालय के कदमों को लेकर अग्रिम जानकारी का प्रमुख जरिया थी। नए मंत्री की मीडिया टीम काम संभालने के कई महीने बाद भी अभी तक ठीक से सहज नहीं हो पाई है। इसका खमियाजा पत्रकारों को उठाना पड़ रहा है क्योंकि मीडिया टीम उनसे बात करते हुए भी अतिरिक्त सतर्कता बरतती है। सवाल यह है कि कहीं यह मंत्रालय भी वित्त मंत्रालय की राह पर तो नहीं चल निकलेगा जिसने गत वर्ष जुलाई से ही पत्रकारों का प्रवेश प्रतिबंधित कर रखा है।

बेरोजगारी रजिस्टर!

नागरिकता संशोधन अधिनियम (सीएए) और राष्ट्रीय जनसंख्या रजिस्टर (एनपीआर) का मसला इन दिनों मीडिया पर छाया हुआ है। कांग्रेस ने इस सिलसिले में राष्ट्रीय बेरोजगारी रजिस्टर (एनयूआर) शीर्षक से एक अभियान शुरू किया है। इस अभियान के तहत पार्टी के कार्यकर्ता उत्तर प्रदेश के हर जिले में बेरोजगार युवाओं के आंकड़े जुटाएंगे। बाद में इस आंकड़े को राज्य स्तर पर और राष्ट्रीय स्तर पर एकत्रित किया जाएगा। इसका इस्तेमाल सत्ताधारी भारतीय जनता पार्टी पर हमला करने के लिए किया जाएगा। युवा कांग्रेस की उत्तर प्रदेश इकाई ने इस सिलसिले में अभियान शुरू भी कर दिया है। पार्टी ने इस संबंध में एक मोबाइल नंबर भी जारी किया है। बेरोजगार युवा उस पर मिस्ड कॉल देकर अपना पंजीयन एनयूआर में करा सकते हैं।

आपका पक्ष

सीएए के लिए क्यों नहीं जाते अदालत

देश की संसद ने नागरिकता संशोधन कानून (सीएए) पारित किया है। इस कानून के तहत पाकिस्तान, बांग्लादेश और अफगानिस्तान में धार्मिक प्रताड़ना झेल रहे गैर मुस्लिम लोगों को भारत में नागरिकता मिल सकेगी। इस कानून का अभी बीज ही बोया गया है। जब तक यह फल नहीं देने लगे तब तक इसका आकलन करना उचित नहीं है। वहीं नागरिकता संशोधन कानून जब तक पूरे देश में लागू नहीं हो जाता तथा सर्वोच्च न्यायालय में इस मामले पर फैसला नहीं हो जाता तब तक इसका विरोध करना नासमझी ही होगी। भारत दुनिया का सबसे बड़ा लोकतांत्रिक देश है। लोकतंत्र की मजबूती के लिए जितनी मुख्य भूमिका लोगों द्वारा चुनी गई सरकार की होती है, उतनी ही लोकतंत्र की सुरक्षा के लिए विपक्ष की भी जरूरत होती है। लेकिन वर्तमान में देश की

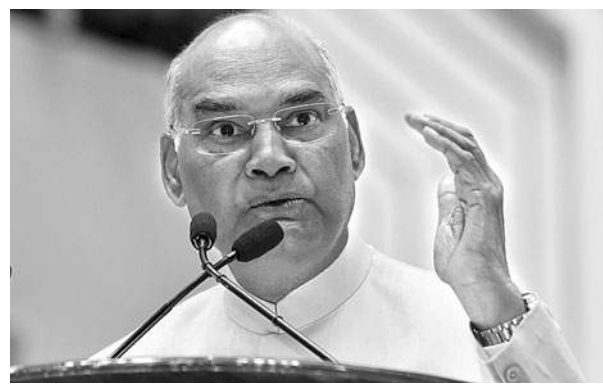

राजनीति अवसरवाद की शिकार होती दिख रही है। इसलिए राजनीतिक पार्टियों को न तो संविधान की चिंता है और न ही न्यायपालिका पर भरोसा रह गया है। सीएए पर विपक्षी पार्टियां अपने वोट बैंक को ध्यान में रखते हुए धर्म विशेष के लोगों को गुमराह कर रही हैं। नागरिकता संशोधन कानून को संसद ने

सीएए के विरोध में हिंसा के खिलाफ कई प्रबुद्ध लोगों ने राष्ट्रपति को पत्र लिखा था

पारित कर दिया है जिसके बाद इसे असंवैधानिक नहीं कहा जा सकता है। लेकिन संसद से पारित किसी कानून को लेकर अगर कोई उच्चतम न्यायालय में चुनौती दे तो अदालत उसकी संवैधानिकता पर फैसला लेने के लिए तैयार हो सकता है। केरल सरकार ने सीएए को लेकर अदालत की शरण ली है। ऐसे लोग जो सीएए को राजनीति के चश्मे से देख रहे हैं, उन्हें इस पर विचार करना चाहिए कि देश का सर्वोच्च न्यायालय न तो किसी सरकार की और न ही किसी धर्म विशेष के लोगों की हाथ की कठपुतली है। अत: हिंसा के साथ विरोध करने वालों को अदालत की शरण लेनी चाहिए जिससे विरोध के नाम पर हिंसा पर रोक लग सके।

राजेश कुमार चौहान, जालंधर

सरकारी अस्पतालों की बदहाली दूर हो

सरकारी अस्पतालों में किसी मरीज को इलाज के लिए पहले ओपीडी से 15 रुपये की पर्ची बनानी पड़ती है जिसके बाद डॉक्टर मरीज की जांच करते हैं। निजी डॉक्टरों को दिखाने की फीस तकरीबन 400 रुपये हैं। सरकारी अस्पतालों में किसी भी बीमारी की दवा मुफ्त में मिल जाती है। सरकारी अस्पताल में फीस का कम होना तथा मुफ्त में दवा मिलना इनकी बदहाली का एक कारण हो सकता है। सरकारी अस्पतालों की बदहाली दूर करने के लिए केवल गरीबों का इलाज मुफ्त में करना चाहिए। इसके लिए गरीबों की परिभाषा तय करने की जरूरत है। एक निश्चित आय वर्ग को अर्थात गरीबी रेखा से नीचे रह रहे लोगों का ही इलाज मुफ्त होना चाहिए। इसके अलावा अस्पतालों की देखभाल का जिम्मा शहर के नगर निगम तथा नगरपालिका को दे देनी चाहिए। बहरहाल सरकारी अस्पताल के कारण ही लाखों गरीब लोगों का मुफ्त इलाज हो पाता है तथा गंभीर रोग का भी इलाज होने से गरीब मरीजों की जान बच जाती है।

राकेश जैन, सतना

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिजनेस स्टैंडर्ड, 4, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली - 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in उस जगह का उल्लेख अवश्य करें, जहां से आप ईमेल कर रहे हैं।